आज तुलसी के सामंजस्यवाद की जरूरत

इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ में भी तुलसीदास हिंदी के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि हैं । उनकी लोकप्रियता के कई कारणों में उनकी सामंजस्यवादी दृष्टि प्रमुख है । समन्वय का आधार, अपने-पराये के भेदभाव का अभाव है । सारे उपद्रव की जड़ भेदभाव के कारण ही होती है । जहां भेद है वहां भय और अशांति अवश्य होगी । आज परिवार, समाज, प्रान्त, राष्ट्र एवं विश्व में व्याप्त परिवेशगत तनाव, आतंक, क्षोभ, असंतोष, अलगाव आदि को सामंजस्य की भावना के द्वारा ही दूर किया जा सकता है । वस्तुतः आज आध्यत्मिक और भौतिक मूल्यों का संतुलन बिगड़ गया है ।

गोस्वामी तुलसीदास एक ऐसे मनीषी, चिंतक, भक्त, उदात्तमना जन कवि हैं, जिन्होंने अपने राम की पूंजी के बल पर तत्कालीन परिवेशगत समस्याओं का निराकरण किया । आज हम उसी में वर्तमान समस्याओं का हल ढूंढ़ रहे हैं । विश्वबन्धुत्व और सर्वधर्म समभाव की भावनाएं आज पहले से कहीं ज्यादा जरुरी हो गई हैं । सभी धर्मों के मूल में सहिष्णुता, सद्भाव, प्रेम एवं परोपकार आदि के भाव विद्यमान हैं । दुःखद पक्ष है कि उनकी मजहबी उन्माद की खबरें आए दिन पढ़ने को मिलती रहती हैं । राम प्रश्नचिन्ह के घेरे में आ गए हैं । जबकि रामोन्मुखता तुलसी का सबसे बड़ा मूल्य था । तुलसी ने आज राम को सामाजिक, जागतिक एवं समकालीन नैतिक मूल्यों के आदर्शों का जीवन्त प्रतीक बना दिया है । लोक में सामंजस्य का जितना अवकाश मानस में मिलता है उतना कबीर, जायसी और सूर की रचनाओं में नहीं है । व्यक्ति जीवन के संघर्ष को राम में देखा जा सकता है । शताब्दि कवि निराला ने राम और तुलसी के संघर्ष से प्रेरणा प्राप्त की ।

"मंगल करनि कलि-मल हरनि, तुलसी कथा रघुनाथ की" के विचारों द्वारा तुलसी सम्पूर्ण मानवजाति का कल्याण करना चाहते थे । राम और समन्वयवादी नीति ही उनकी शक्ति थी । राम को उन्होंने मानव और ब्रह्म के रूप में दोनों मंचों पर उतारा । राम का मानव रूप अधिक मुखर हुआ है ब्रह्म का कम । राम करुणावान शीलवान परदुःखकातर एवं लोकवादी हैं क्योंकि वे लोकमंगल और विवेक के विधायक और प्रतीक हैं । तुलसी ने राम के जिस दीनबन्धुता का गुणगान किया है उसी भाव को धारण करने वाले महात्मा गांधी, विनोबा भावे, नेल्सन मंडेला, मदरतेरेसा, बाबा आम्टे आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।

तुलसी ने मानस में जिस कपटी, कुचाली, मद्यप एवं द्यूत क्रीडा में रत कामी, लम्पट और क्रूर हृदय वाले समाज का वर्णन किया है वह आज भी हमारी आंखों के सामने है । इससे मुक्त होने के लिए हमें मानस के विविध प्रसंगों, विचारों और मूल्यों का अवगाहन करना होगा जिनसे कि हमारी आन्तरिक शक्ति का विकास हो सके । पहली बात तो 'बैर न कर काहू सन कोई । राम प्रताप विषमता खोई' विचारों द्वारा आन्तरिक मल को साफ कर सद्भाव की भावना को विकसित करना होगा । राम की भक्ति में आत्मकल्याण और लोककल्याण का अनूठा समन्वय है । 'सरल बचन नहिं मन कुटिलाई । जथा लाभ संतोष सदाई' द्वारा व्यक्तिगत आचरण की शुद्धता पर बल दिया जा सकता है । आचरण की शुद्धता से ही सामाजिक जीवन को पवित्र बनाया जा सकता है ।

कबीर, सूर और तुलसी आजीवन अपने प्रभु से जुडे रहे लेकिन इनके जुडने का मार्ग अलग-अलग था । तुलसी की खास बात यह थी कि इनके काव्य में भक्त, संत कवि, शात्रज्ञ, काव्य पंडित आदि रूपों का

समन्वय मिलता है। तुलसी के चिंतन में ज्ञान, भक्ति और कर्म का भी अद्‌भुत सामंजस्य पाया जाता हैं। तुलसीदास की समन्वय दृष्टि के संदर्भ में हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत है - " समन्वय का अर्थ है कुछ स्वयं झुकना और कुछ दूसरों को झुकने के लिए बाध्य करना। तुलसीदास को ऐसा करना पडा क्योंकि ऐसा करने के लिए उनमें असामान्य दक्षता थी। उनका सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। उसमें केवल लोक और शास्त्र का ही समन्वय नहीं है बल्कि वैराग्य और गृहस्थ का, भक्ति और ज्ञान का, भाषा और संस्कृति का, निर्गुण और सगुण का, पुराण और काव्य का, भावावेश और अनासक्त चिंतन का, ब्राह्मण और चाण्डाल का, पंडित और अपंडित आदि का भी समन्वय दिखाई देता है। इस महान समन्वय का आधार उनका रामचरितमानस है।

वस्तुतः एक सफल चिकित्सक, समाजसुधारक, राजनीतिज्ञ एवं साहित्यकार अपने-अपने ढंग से सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न करता है। सभी सामंजस्यवादी सदैव एक ही तत्व या किसी एक विचारधारा के समर्थक या पोषक नहीं रहते। युग की मांग के अनुसार वे कभी एक का और कभी दूसरे का समर्थन करते रहते हैं। कबीर ने अति भावुकता का खंडन बौद्धिकता की स्थापना के लिए किया तो तुलसी ने ज्ञानमार्गियों की बढ़ी हुई तार्किकता के निराकरण के लिए भावना का समर्थन किया। साहित्य में प्रायः राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक और परिवारिक जीवन की किसी एक या दो समस्या को लेकर काव्य का स्थूल आधार तैयार किया जाता है किन्तु तुलसी के रामचरितमानस में इन सभी विषयों का समन्वय इस प्रकार हुआ है कि हम उन्हें एक दूसरे से विच्छिन्न नहीं कर सकते। मानस में तुलसी ने समाज की कल्याण भावना से युक्त जीवनमूल्यों की स्थापना की है। ये मूल्य देश और काल की सीमाओं को पार कर समस्त मानवजाति को सुखशांति और समृद्धि के पथ पर अग्रसर करते है। राम-मानस की रचना करते समय तुलसी के मन में धर्म, दर्शन, समाज, भक्ति और राजनीति जैसे अनेक विषय रहे होंगे जिनका संकेत और समन्वय स्थान-स्थान पर मिलता है। यही कारण है कि तुलसी को लोकनायक कहा गया। वस्तुतः उनका सम्पूर्ण काव्य लोकमंगल की भावना से प्रेरित है। गांधी के रामराज्य की कल्पना का आधार मानस ही तो है। "जासु राज प्रिय-प्रजा दुखारी। सोनृप अवसि नरक अधिकारी" उक्ति से आज के राजनेताओं को सीख लेनी चाहिए। राम और उनकी भक्ति के द्वारा तुलसी उन तमाम सामाजिक विषमताओं को दूर कर सबके लिए एक ऐसा मंच निर्मित करते हैं जहां अपने-पराए का भेदभाव मिट जाता है।

"जाति पांति कुल धर्म बड़ाई।
धन बल परिजन गुन चतुराई॥
भगति हीन नर सोहइ कैसा।
बिनु जल वारिद देखिउ जैसा।

दरअसल तुलसी के राम समता की मूर्ति और मानवमात्र की समानता के पोषक हैं। वानरी एवं राक्षसी सभ्यता में पलने वाले सुग्रीव, अंगद, हनुमान, नल नील, विभीषण आदि उनके मित्र हैं। लंका को राजतंत्र के चंगुल से मुक्त कराकर उन्होंने निरकुंश सत्ता का अंत किया। आधुनिक पाश्चात्य विचारक कार्ल मार्क्स ने भी तो साम्यवाद की स्थापना के लिए शोषक शक्तियों के विनाश की बात की थी। आज जिस दलित-विमर्श की चर्चा जोरों पर है उसका उदारवादी दृष्टिकोण मानस में भरा पड़ा है।

समन्वय की विचारधारा को सशक्त बनाने के लिए तुलसी ने अपने युग, परिस्थितियों का गम्भीर अध्ययन और विवेचन किया होगा। मानस के समाज

विज्ञान के आलोक में वर्तमान समाज की विसंगतियों को समूल नष्ट किया जा सकता है । इसके लिए हमें तुलसी के निम्न विचारों को अपनाना होगा ।

"प्रीति राम सों नीति पथ ।
चलिय रागरिस जीति ।
तुलसी संतन के मते ।
इहै भगति की रीति ।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत है - " तुलसी की भक्ति से जीवन में शक्ति, सरलता, प्रफुल्लता और पवित्रता सब कुछ प्राप्त होती है । आज जिस नारी-विमर्श एवं उसके संवैधानिक अधिकारों की बहसें जोरों पर है उसे तुलसी ने "कत विधि सृजी नारि जग माही । पराधीन सपनेहुं सुख नाही" कहकर समाज में उसे सही पहचान दी । तुलसी ने भोग्या, कामी, कुलटा और अधम नारियों की निंदा की है । मूल्य विहीन नर-नारियों का समाज में सदैव ही निंदनीय स्थान रहा है लेकिन आज भौतिकता के युग में लोगों की मानसिकता में बदलाव आया है । तुलसी ने पतिव्रता, कुलशीला, सदाचरण करने वाली नारियों का सम्मान किया है ।

अपने युग की विभिन्न दार्शनिक एवं साम्प्रदायिक विचारधाराओं में भी मानस के रचयिता ने सुन्दर समन्वय स्थापित किया है । इन्होंने ज्ञान की महिमा को मंडित करते हुए भी भक्ति को श्रेष्ठ माना और दोनों में एक अद्‌भुत समन्वय भी स्थपित किया । "कहहिं संत मुनि वेद पुराना । नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना" कहकर तुलसी निर्गुण और सगुण को ब्रह्म के दो रूप मानते हुए दोनों में समन्वय भी स्थापित करते हैं । अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरुपा । अकथ अगाध अनादि अनूपा । अगुन अरुप अलरव अज जोई, भगत प्रेम बस सगुन सो होई । वस्तुतः राम एक है निर्गुण और सगुण, निराकार और साकार, अव्यक्त और व्यक्त, अंतर्यामी और बहिर्यामी, गुणातीत और गुणाश्रय है, निर्गुण राम ही भक्तों के प्रेम वश सगुण रूप में प्रकट होते हैं । दोनों में परस्पर कोई विरोध नहीं है । यह विश्वास की बात है ।

तुलसी ने तत्कालीन संस्कृतियों, जातियों धर्मावलंबियो के बीच समन्वय स्थापित करके दिशाहीन समाज को नई दिशा प्रदान की । समन्वय का यह भाव उनकी अनुभूति एवं अभिव्यक्ति में भी झलकता है । कवि की भाषा की सहजता, सरलता और उत्कट संप्रेषणीयता मानवमूल्यों को जोड़ती है । तुलसी के काव्य में संस्कृत, अवधी, ब्रजभाषा, विदेशी देशज आदि भाषाओं का सुन्दर सामंजस्य मिलता है ।

लोक द्रष्टा तुलसी ने भारतीय जनता की नस-नस को पहचान कर ही रामचरितमानस के द्वारा समन्वयवाद का अद्‌भुत आदर्श प्रस्तुत किया । वैसे तो हमारी भारतीय संस्कृति में सब्र और समन्वय का भाव पहले भी था और आज भी है । इसका आकलन हम आज की परिस्थितियों के संदर्भ मे कर करते है । आज मीडिया, कंप्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी आदि के विस्फोट ने भारतीय संस्कृति की समन्वयवादी विचारधारा को तहस-नहस कर दिया है । हमारी संस्कृति त्याग की रही है किन्तु आज भोग की प्रवृत्ति प्रधान हो रही है । सामाजिक व्यवस्था के तार छिन्न-भिन्न हो रहे है । विश्वस्तर पर आतंकवाद चुनौती बन चुका है । इस प्रकार की विषम परिस्थिति में तुलसी की लोकपरक दृष्टि एवं समन्वयवादी विचारधारा ही मानवजाति को मानसिक एवं आत्मिक शांति प्रदान कर सकती है ।

- डॉ. रवीन्द्रनाथ मिश्र
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
गोवा विश्वविद्यालय ।